मई - जून 2012 वर्ष - 2 , अंक - 12

जीवन का मार्ग

"देख, उसकी आनन्द भरी चाल यही है"

अय्यूब 8:19अ

विषय वस्तु

संपादकीय ---------- 1
परम्पराएँ और प्रथाएँ ---------- 2
बाइबल में माताएँ-3 ---------- 5
यीशु मेरा प्रभु ---------- 7
परमेश्वर के वचन का अध्ययन क्यों आवश्यक है? ------ 9
बाइबल ज्ञान प्रतियोगिता क्रमांक - 12 ---------- 14
शब्द पहेली ---------- 16
मूसा:परमेश्वर अपने लोगों को छुड़ाता है ---------- 17

बाइबल ज्ञान प्रतियोगिता क्रमांक - 10
का उत्तर

सभी प्रश्न गलतियों की पुस्तक से लिये गये थे।

1. स्वतन्त्रता (5:1)।
2. विनाश की कटनी (6:8)
3. पुत्र की आत्मा (4:6)
4. मसीह को (3:27)
5. इब्राहिम और उसके वंश (3:16)
6. विश्वास (3:11)
7. यीशु मसीह पर विश्वास करने के द्वारा (2:16)
8. यीशु मसीह के प्रकाश से 1:11,12
9. मसीह का स्वरूप बनने (4:19)
10. वारिस (4:7)

नोट : इस बार किसी के भी उत्तर पूर्ण रूप से सही नहीं थे, इसलिए किसी को भी विजेजा घोषित नहीं किया जा रहा है।

मसीही विश्वासियों की आत्मिक उन्नति एवं वचन में बढ़ती के उद्देश्य से प्रकाशित एवं प्रसारित अर्न्तसामुदायिक द्विमासिक पत्रिका
पत्र व्यवहार के लिये पता
जीवन का मार्ग
पोस्ट बॉक्स् न. - 27,
बिलासपुर - 495 001, छ.ग.

संपादकीय

एक दिन एक व्यक्ति किसी बगीचे में चोरी करने गया। निगरानी के लिये वह अपने छोटे बालक को भी साथ लिये चला ताकि किसी के आने की खबर उसे मिल सके। उसने बालक को निर्देश दिया कि यदि किसी कीआहट मिले तो खबर करना।

पिता जल्दी जल्दी फल तोडकर अपनी झोली में भरता जा रहा था, सहसा बालक चिल्ला उठा। पिताजी, कोई देख रहा है। बालक की बात से घबराया पिताजी सरपट नीचे उतरने लगे।

कौन है? कहां है? कौन देख रहा है?घबराहट से पिता इधर उधर देखने लगे। पिता की हडबडाहट देख पुत्र ने कहा, पिताजी ईश्वर देख रहा है!!

यह छोटी सी कहानी हमारे मसीही जीवन में कितना वास्तविक है। मसीह हमारे साथ रहता है। वह हमारे प्रत्येक कार्य को देखता और जानता है। हम उससे कुछ भी छिपा नहीं सकते हैं। हमें अपना जीवन परमेश्वर के लिये ग्रहण योग्य बनाना है। यही सच्चा और परमेश्वर को भावता हुआ बलिदान है। आईये स्वयं को उसके सामने भावता हुआ बलिदान करके चढायें।

प्रभु की सेवा में

संपादक

परम्पराएँ और प्रथाएँ - गतांक से जारी

साजु जे. मैथ्यू

उसका सोचना था कि जीवन का जल पात्र में भरकर पिया जाता है! वह उसे आत्मिक दृष्टि से नहीं देख पाती है। ऐसे किसी शब्द को उसने कभी सुना नहीं है। वह इस विषय में अनजान है। अनजान होने पर भी उसे परंपराओं के विषय में अच्छा ज्ञान है। वह पूछती है कि, "क्या तू हमारे पिता याकूब से भी बड़ा है जिसने हमें यह कुआँ दिया है?"

सामरी लोग अपने आपको याकूब की सन्तान कहा करते थे। उनमें से एक अच्छा प्रतिशत स्वयं को याकूब के बेटे यूसुफ के बेटे एप्रैम और मनश्शे के वंशज मानते थे। धर्मशास्त्र में भी कई स्थलों पर इस्राएल राष्ट्र को एप्रैम सम्बोधित किया गया है। इसलिये सामरी स्त्री का कहना गलत नहीं है। परंपरा की समस्या भी यही है। उनके कहने में कई बार सत्य होता है किन्तु परंपराओं को आवश्यकता से अधिक महत्व देना हमें वचन के प्रति नम्रता दिखाने से रोक देती है।

बहुत संभव है कि यह आज्ञानी स्त्री समाज द्वारा बहिष्कृत भी हो। शायद इसीलिए वह इस भरी धूप में शहर से एक किलामीटर दूर स्थित कुँए पर पानी भरने आई। किन्तु आज्ञानी और तिरस्कृत होने पर भी वह अपनी परंपराओं और प्रथाओं पर 'गर्वान्वित' होती है। किन्तु प्रभु कहता हैं कि परंपराएँ नहीं जिन्दगी बड़ी होती है। तुम्हारा पति कहाँ है, उसे लेकर आओ।

जिन्दगी को छूने पर स्त्री के भीतर कहीं हलचल हुई: हो न हो, यह कोई भविष्यद्वक्ता ही है। कह कहती है, हे भविष्यद्वक्ता, मैं एक पापी हूँ। किन्तु तू ही बता, मैं कहाँ अपना पापबलि चढ़ाऊँ? हमारी परंपरा के अनुसार हमारे पूर्वज इस पहाड़ (गिरिज्जीम पहाड़) पर आराधना करते हैं। तुम लोग कहते हो कि यरूशलेम में आराधना करनी चाहिए। क्या सही है? तू तो भविष्यवक्ता है। हमारे विवाद का हल बता।

सामरी लोग गिरिज्जीम पहाड़ को बहुत महत्व देते थे। जैसी जैसी बातें यहूदी

यरूशलेम के विषय कहते थे वे सब बातें सामरी गिरिज्जीम के विषय भी कहते थे। सामरी सिखाते थे कि अब्राहम ने गिरिज्जीम पर्वत पर ही इसहाक का बलिदान किया था। इसी पहाड़ पर ही उसकी भेंट मल्किसिदेक से हुई थी। वे कहते थे कि इस्राएल ने यहोवा को पहला बलिदान भी यहीं चढ़ाया था।

पलिस्तीन में एक कथा प्रचलित थी कि सामरी गिरिज्जीम पहाड़ को कितना अधिक महत्व दिया करते थे। एक दिन रब्बी यूहन्ना गलील से सामरिया होकर यरूशलेम जा रहे थे। किसी सामरी ने उन्हे रोक कर पूछा: "कहाँ जा रहे हैं?"

"यरूशलेम में प्रार्थना करने जा रहा हूँ।" उन्होने जवाब दिया।

"वह किसलिए? सामरी ने पूछा: "क्या इस पहाड़ पर प्रार्थना करना काफी नहीं है? क्या उस श्रापित पहाड़ पर जाना जरूरी है?"

पश्चाताप होने पर भी सामरी स्त्री की परंपराएँ उसे विश्वास करने से रोकती हैं। किन्तु यहाँ हम सामरी स्त्री द्वारा परंपराओं को तज कर मसीह के वचन को स्वीकार करने का दृश्य देखते हैं जबकि यहूदी, परंपराओं पर लटक कर यीशु को मारने का प्रयास कर रहे थे।

परंपराओं के समान वा उससे बढ़कर वचन श्रवण और स्वीकरण से रोकने वाली एक और नुकसान दायक बात है प्रथाएँ। जैसा कि पहले भी बताया गया है कि परंपराओं के समान ही प्रथाओं को भी हमारे पूर्वजों ने ही प्रारंभ किया था।

परंपराओं के समान ही प्रथाओं में भी मनुष्य को गलत अथवा सही रीति से प्रभाविक करने की सामर्थ होती है। कुछ प्रथाएँ जब मनुष्यों को स्वस्थ और धार्मिक भलाई प्रदान करती है तो कुछ प्रथाओं में इसके अलावा कोई बात दृष्टिगोचर नहीं होती कि वे हमारे पूर्वजों द्वारा स्थापित की गईं थी।

प्रथाओं की कुछेक बातें यदि अर्थपूर्ण होंगी तो कई अन्य बातें गैरजरूरी भी होंगी। एक बार एक गुरु द्वारा पूजा के दौरान उनकी बिल्ली अत्यधिक परेशान किया करती थी। इस उपद्रव से बचने के लिए वे पूजा शुरु होने से पहले बिल्ली को एक टोकरी में बन्द दिया करते थे। उसके पश्चात् वे पूजा करते थे। गुरु की मृत्यु हो गई। गुरु के स्थान पर अब शिष्य पूजा करने लगा। वह भी बिल्ली को बन्द कर पूजा किया करते थे। कुछ दिनों के पश्चात् बिल्ली मर गई। अब क्या करें! पूजा बाधित हो गई। पूजा के पहले

बिल्ली को बन्द करने का चलन था। अब बिल्ली तो थी नहीं, अन्ततः कहीं से एक बिल्ली का जुगाड़ कर उसे डिब्बे में बन्द करके पूजा पुनः प्रांरभ हुई।

यह निरर्थक तो थी फिर भी किसी को इससे नुकसान भी नहीं था। किन्तु कुछ प्रथाएँ निरर्थक ही नहीं हानिकारक भी होती हैं। इसका सबसे बड़ा उदाहरण सती जैसी प्रथाएँ हैं।

'ये सब तो अन्यजातियों की प्रथाएँ हैं' कहकर मत टालिए। हम मसीही भी कई प्रथाओं का पालन करते हैं।

यहूदियों के मध्य प्रथाओं ने कुछ और ही मुसीबत पैदा की थी। उन्होंने व्यवस्था को प्रथाओं से बदल डाला था। या तो व्यवस्था का पालन करो, और अगर नहीं कर पाते हो तो अमुक - अमुक बातें करो- मानो कह रहे हों कि ट्रेन में बेटिकट यात्रा करने का जुर्माना हजार रूपये है। अगर जुर्माना नहीं दे पाए तो तीन महीने जेल।

व्यवस्था के अनुसार एक व्यक्ति को अपने पिता और माता की देखभाल करनी थी। यह बेटे का कर्तव्य होता था। माता-पिता की देखभाल न करनेवालों को मृत्यु दण्ड निश्चित किया गया था। किन्तु यहूदी व्यक्ति प्रथाओं की सहायता से इस दण्ड से छूट सकता था। मात्र इतना कह देने से कि जो कुछ तुझे देना था उसे मैंने मन्दिर में दे दिया है उसे माता पिता की देखभाल करने की आवश्यकता नहीं होती थी (मत्ती 15:5) - जैसी बातें फरीसी सिखाया करते थे। माता-पिता को जो धन देना था उसे मन्दिर में चढ़ा देना काफी होता था।

आज के समय में इसकी व्याख्या इस प्रकार की जा सकती है। एक धर्म भक्त बेटा अपने पिता से कहता है, "पिताजी आपको देने के लिये मैंने पाँच सौ रूपया रखा था, लेकिन क्या करें उसे मैंने एक कन्वेन्शन सभा करने के लिये दे दिया।" ऐसा कहने से वह अपने पिता के प्रति कर्तव्य से मुक्त हो जाता है। (ऐसे में जब भी दान करने की बात आती है तो धन में से दान करता है जो उसने पिता के लिये रखा है)।

वचन का पालन करना है और परमेश्वर का इच्छा उससे कहीं भी कम नहीं है। इसलिये फरीसी कहा करते थे, कि धर्म के लिये या धर्म की रक्षा के लिये वचन के पालन में कुछ समझौता किया जा सकता है। बृद्ध माता-पिता अनाथ रहें तो कोई बात नहीं परमेश्वर के मन्दिर का भेंट वहाँ पहुँच जाना चाहिए। वचन के पालन करने का

शेष पृष्ठ 10 पर...

बाइबल में माताएँ - 3

सारा - अब्राहम की पत्नी सारा इस्राएल राष्ट्र की माता कहलाती है। सारा का वास्तविक नाम सारै था, जो बाइबल में वर्णित उन कई स्त्रियों में से एक थी जो सन्तानोत्पति की क्षमता नहीं रखती थी। यह उसके लिए दुगुनी परेशानी का कारण था क्योंकि परमेश्वर ने उसके पति अब्राहम को एक बड़ी जाति का पिता होने की आशीष दिया था, जिसमें उसके वंश समुद्र के बालुओं और आकाश के तारागणों के समान होना था।

कई वर्ष इन्तजार करने के पश्चात सारै ने अब्राहम को इस बात के लिए सहमत किया कि वह उसकी दासी हाजिरा को अपनी पत्नी के रूप में स्वीकार करे। इस प्रकार उत्पन्न सन्तान को इश्माएल नाम दिया गया। परन्तु परमेश्वर ने अपनी प्रतिज्ञा को नहीं भूला था। तीन स्वर्गीय प्राणी, अब्राहम के सामने प्रगट हुए और उन्होंने परमेश्वर की प्रतिज्ञा को अब्राहम के सामने दोहराया, कि उसकी पत्नी उसके लिए सन्तान उत्पन्न करेगी। यद्यपि

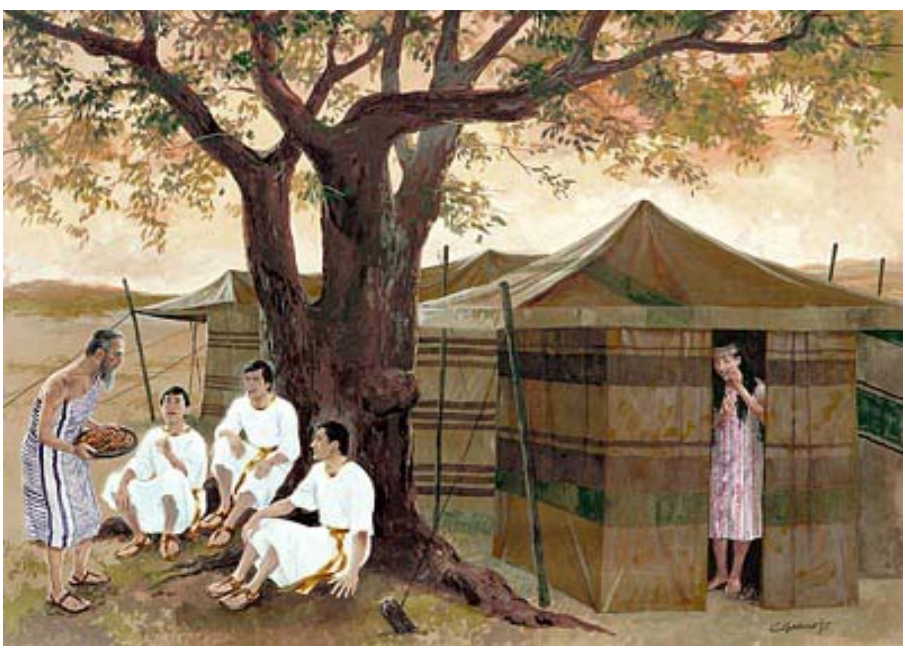

सारा बहुत बूढ़ी हो चुकी थी, फिरभी वह गर्भवती हुई और उसने एक पुत्र को जन्म दिया। उसका नाम इसहाक रखा गया।

बाइबल की यह कहानी कई बातों में हमारे मसीही जीवन के लिए प्रेरणादायक है। सारै की जर्जर वृद्धावस्था में भी उसे सन्तान देने वाला परमेश्वर, कठोर से कठोर मरुस्थल में भी इस्राएलियों को तृप्त करने वाला परमेश्वर आज भी मसीही जीवन की कठोर धरातल पर हमें आशा और आगे बढ़ने की प्रेरणा देता है।

सारा की सामर्थ अपने पति के प्रति उसकी आज्ञाकारिता में थी। यहाँ तक कि जब अब्राहम ने उसे अपनी बहन कहा, जिसके परिणामस्वरूप वह फिरौन के हरम में पहुँचाई गई तब भी उसने प्रतिवाद नहीं किया। सारा इसहाक के लिए रक्षात्मक थी और उससे गहराई से प्रेम करती थी।

यद्यपि सारा ने अपने विश्वास के लिए संघर्ष किया फिर भी परमेश्वर ने उसे इस योग्य जाना कि वह इब्रानियों 11 में वर्णित विश्वास के महान व्यक्तियों की सूची में शामिल की जाए।

सारा की कमजोरी यह थी कि उसने परमेश्वर पर सन्देह किया। परमेश्वर पर विश्वास करना उसे कठिन लग रहा था क्योंकि परिस्थितियाँ कहीं से भी अनुकूल नहीं थी, इसलिए उसने मानवीय कल्पनाओं के वशीभूत होकर समस्या का समाधान ढूँढ़ने का प्रयाय किया।

अपने जीवनों में परमेश्वर के कार्य की बाट जोहना संभवतः जीवन का सबसे कठिन क्षण होता है। यह भी सत्य है कि जब परमेश्वर का समाधान हमारी अपेक्षयों के अनुरूप न हों तो हम असन्तुष्ट हो जाएँ किन्तु विश्वास रखें, परमेश्वर सच्चा है, वह अपनी प्रतिज्ञाओं को पूरा करता है। सारा का जीवन हमें सिखाता है कि जब हम शंका या भय का अनुभव करते हैं तो हमें स्मरण करना चाहिए कि परमेश्वर ने अब्राहम से क्या कहा था, क्या परमेश्वर के लिए कुछ असंभव है? (उत्पत्ति 18:14)

सारा ने एक सन्तान के लिए 90 वर्ष की उम्र तक इन्तजार किया था। निश्चय ही, उसने मातृत्व सुख भोगने की सारी आशाएँ छोड़ दी थी। सारा वास्तव में परमेश्वर की प्रतिज्ञाओं को अपने सीमित दृष्टिकोण से देखने का प्रयास कर रही थी, किन्तु परमेश्वर ने अपनी अदभुत योजना को प्रगट करने के लिए उसी के जीवन का उपयोग किया। कभी कभी हम महसूस करते हैं कि परमेश्वर ने हमारे जीवन को स्थाई कर दिया है। जीवन के मामलों को अपने हाथ में लेने के बजाय, सारा की कहानी के अनुसार हम परमेश्वर के समय के लिए बाट जोह सकते हैं ताकि उसकी योजना हममें पूरी हो सके।

सारा का मूल ग्राम अज्ञात है। उसकी कहानी अब्राहम के साथ उसके विवाह से प्रारंभ होती है। किन्तु बाइबल की संपूर्ण कथा पर उसका प्रभाव कहीं अधिक था। हमारा विश्वास और उससे कहीं अधिक परमेश्वर का अनुग्रह हमें मूल्यवान बनाता है। यदि परमेश्वर का अनुग्रह हम पर से हट जाए तो हमारा सारा मूल्य जाता रहेगा।

यीशु मेरा प्रभु

1 कुरिन्थियों 10:9,10

ए. जे. अब्राहम, बिलासपुर

आज संसार में यीशु मसीह को गुरू, एक अच्छा शिक्षक जैसे बहुत सारे संबोधन हम देते हैं। लेकिन हमारे जीवन में उसकी वास्तविक भूमिका क्या होनी चाहिय? एक गुरू और प्रभु में बहुत अन्तर होता है। गुरू की सलाह आप मान भी सकते हैं, नहीं भी मान सकते हैं; लेकिन प्रभु हमें सलाह नहीं देता है, वह हमें आज्ञा देता है। प्रभु वह होता है जिसके हाथों में हम अपने जीवन को सौंप देते हैं। उसके पश्चात् हमारे जीवन पर प्रभु का अधिकार होता है। यीशु हमारे जीवन का प्रभु होना चाहिये। यीशु का स्थान हमारे जीवन में गुरू बढ़कर होना चाहिये। यीशु को हम वह स्थान दें जो यीशु का है।

पौलुस जिनको यह पत्री लिख रहा है वे अच्छी तरह जानते थे कि किसी को प्रभु कहने का अर्थ क्या था। रोम का राजा कैसर के पदनाम से जाना जाता था। वह जनता राजा ही नहीं बल्कि उनका प्रभु भी होता था। प्रजा के जीवन मरण पर उसका अधिकार होता था। ऐसी परिस्थिति में कैसर को छोड़ किसी और को प्रभु कहना विशुद्ध रूप से मृत्यु को गले लगाना था।

पौलुस के काल में रोमी राज्य में बहुत से समझौता वादी मसीही थे। वे दो नाव पर सवार रहना चाहते थ। आज हमारे दौर में भी बहुत से लोग हैं जो परमेश्वर से भी सब कुछ पाना तो चाहते हैं और संसार से भी; वे परमेश्वर से हर आशीष को पाना चाहते हैं, लेकिन संसार को छोड़ना नहीं चाहते हैं। परमेश्वर के पीछे चलना तो चाहते हैं। वे मूल्य चुकाने के लिये तैयार नहीं होते हैं। वे सबकुछ यों हीं पा लेना चाहते हैं। वे यीशु को संपूर्ण रीति से समझते नहीं हैं कि यीशु को अपने जीवन में उसका स्थान नहीं देते हैं।

व्यक्ति, जो शैतान के राज्य में जीता है उसे परमेश्वर के राज्य में प्रवेश करना है। इसके लिये उसे परमेस्वर के राज्य में जन्म लेना है। एक शिशु के समान उसे स्वयं को परमेश्वर के हाथों में दे देना है। इसीलिये प्रभु ने नीकुदेमुस से नये सिरे से जन्म

लेने के लिये कहा। एक नयी शुरुआत....। हाँ, हमें नये सिरे से पमेश्वर को जानना होगा। जब तक हम परमेश्वर को नहीं जानेंगे तब तक हम उसके राज्य का अनुभव करना हमारे लिये असंभव होगा। पारमेश्वर के राज्य को देखना और बात है तथा उससे भी गहरी बात है परमेश्वर के राज्य का अनुभव करना।

परमेश्वर के राज्य का अनुभव हम तभी कर सकते हैं जब हम उसे अपना राजा बनाते हैं। यीशु को प्रभु मानने का अर्थ घर में यीशु चित्र टाँगना या गले में क्रूस टाँगना लहीं है। जब हम अपने पापों का परमेश्वर के सामने पश्चाताप् करते हैं और यीशु को अपने जीवन का प्रभु और स्वामी स्वीकार करते हैं तब हमारे जीवन में उद्धार आता है।

जब यीशु हमारे जीवन का प्रभु बनता है तब हम कह सकते हैं, कि हम परमेश्वर के राज्य में जी रहे हैं। यह राजनीतिक परिकल्पना से परे एक गहरी अत्मिक सच्चाई है। यदि हम भी अपने जीवन में यीशु को परमेश्वर का स्थान नहीं देंगे तो हमारे साथ भी यह विडंबना हो सकती है जैसा कि आज संसार के बहुत से लोगों के साथ होती है।

संसार की साच के विपरीत परमेश्वर के वचन की सच्चाई यह है कि हम भले कामों के द्वार परमेश्वर की धार्मिकता को प्राप्त नही कर सकते हैं। यशायाह नबी कहता है कि मनुष्य के सब भले काम परमेश्वर के सम्मुख मैले चिथड़ों के समान हैं। मैं कितने भी भले काम करूँ वह परमेश्वर की धार्मिकता का मुकाबला नहीं कर सकती है। (यशायाह 64:10) । सच तो यह है कि परमेश्वर के सम्मुख खड़े होने के लिये मेरी धार्मिकता काफी नहीं हैं।

बहुत से लोग सोचते है कि वे परमेश्वर के राज्य में प्रवेश कर सकते हैं। वे अनन्त जीवन का वारिस हो सकते हैं। लेकिन परमेश्वर प्रभु यीशु मसीह कहता है, कि बिना परमेश्वर की धार्मिकता को धारण किये हम उसके राज्य में प्रवेश नहीं कर सकते हैं।

हमें यीशु की धार्मिकता पहिनना है। कलवरी के क्रूस पर अपना निष्पाप लहू बहाकर यीशु ने हमारे लिये वह धार्मिकता उपलब्ध करा दिया है। अपने पाप रूपी मैला चिथड़ा उतार कर फेंक दें और उसकी धार्मिकता को पहन लें।

परमेश्वर के वचन का अध्ययन क्यों आवश्यक है?

सुनील एम ए., बिलासपुर

परमेश्वर का वचन हमारे लिए उपहार हैं। यह हमें ईश्वरीय जीवन में हिदायत के लिये दी गयी है। हमारे वर्तमान संदर्भ में परमेश्वर के वचन का अध्ययन करने के लिए बड़े पैमाने पर उपेक्षा बनी हुई है। माता – पिता अपने बच्चों को ध र्मनिरपेक्ष शिक्षा प्रदान करने के लिये बहुत अधिक ऊर्जा, समय और पैसे खर्च कर रहे हैं। यहां तक कि इस उद्देश्य के लिए विशेष ट्यूशन, सेमिनार, और स्टडी टूर आयोजित किये जाते हैं। लेकिन यह हमें वर्तमान जीवन शैली और तकनीकी विकास को समझने के लिए सहायता देगी। यह केवल एक आंशिक ज्ञान है। वास्तविक जीवन को समझने और वर्तमान समय की चुनौतियों का सामना करने के लिये हमें परमेश्वर का वचन में अच्छी तरह से शिक्षित होने की आवश्यकता है। इस मामले में परमेश्वर की चेतावनी इतनी सामर्थी है कि हम केवल रोटी से ही जीवित नहीं रह सकते है! यह पर्चा परमेश्वर के वचन के अध्ययन के महत्व को दिखाने का एक छोटा सा प्रयास है।

1. परमेश्वर ने सख्त आज्ञा दी है कि सभी परमेश्वर के वचन में शिक्षित किए जायें।

इस्राएल को गुलामी से छुडाने के पश्चात परमेश्वर ने घोषणा की कि, ''हे इस्राएल, सुनो, यहोवा हमारा परमेश्वर है। यहोवा एक ही है। तू अपने परमेश्वर यहोवा से अपने सारे मन, अपने सारे जीव, और सारी शक्ति के साथ प्रेम रखना। और ये आज्ञायें जो आज मैं तुझ को सुनाता हूं वे तुम्होरे मन बनी रहें और तू इन्हें अपने बच्चों को समझाकर सिखाया करना और घर में बैठे, मार्ग पर चलते, लेटते, उठते इनकी चर्चा किया करना। और इन्हें अपने हाथ की चिन्हानी करके बांधना और

शेष पृष्ठ 12 पर...

एक और विकल्प देते समय वचन की विशेषता समाप्त हो रही होती है-वचन को निर्वल किया जाता है। फरीसी ने जो किया वह एक बहुत घातक बात थी।

"और ये व्यर्थ मेरी उपासना करते हैं, क्योंकि मनुष्यों की विधियों को धर्मोपदेश करके सिखाते हैं" (मत्ती 15:9)। परमेश्वर के आज्ञा का अनुसरण करने के बजाय मानवीय आज्ञा रुपी प्रथाओं को ऊँचा किया जाता था। वचन के बदले में प्रथाओं को पालन करना भी काफी हो गया था। धीरे-धीरे वचन से बढ़कर प्रथाओं को महत्व दिया जाना लगा।

फरीसियों को यह सोचना भी असम्भव लगता था कि कोई प्रथाओं का पालन न करे और उन्हें हल्की रीति से ले। और यीशु के शिष्य स्वतन्त्रता का उत्सव मनानेवाले थे-वे शिष्यगण-धर्म संबन्धि औपचारिक शुद्धिकरण के बिना भोजन ग्रहण करते थे (यह दोपहर के पहले के भोजन का हाथ धोना नहीं होता था बहुत समय लेकर प्रार्थनाओं को बोलकर औपचारिक शुद्धिकरण हुआ करता था)। तुरन्त ही फरीसियों ने प्रभु से पूछा, "तेरे शिष्यों ने क्यों औपचारिक शुद्धिकरण नहीं किया है? उन्होंने क्यों प्रथाओं का उलंघन किया?"

यह तो अच्छा मजाक हो गया था। वचन का उलंघन नहीं होना चाहिए था। वचन के विकल्प के रूप में प्रथाओं को प्रारंभ किया गया था। उसके लिये वचन का कोई आधार नहीं था, परन्तु अब प्रथाएँ अति महत्वपूर्ण हो गई है।

प्रभु फरीसी से क्रोधित होता है। "तुम लोग प्रथाओं का पालन करने के लिये वचन का उलंघन करते हो।"

आज कलीसिया में कई बार वचन को नहीं बल्कि प्रथाओं को महत्व दिया जाता है। किसी एक बात के लिये वचन में क्या आधार है ऐसा हम नहीं सोचते हैं-हमारे पितामोह ने इस विषय पर क्या किया था ऐसा सोचते हैं। और अपनी बात के समर्थन में हम उस पद का उल्लेख करते हैं जिसमें कहा गया है कि प्राचीनों ने जो सीमा रेखा खींची थी उसका उलंघन हम न करें। और ऐसा करने का पाप भी हम अपने सिर पर उठा लेते हैं।

पूर्वजों के व्यवहारों में-प्रथाओं में-लटके रहने पर हम वचन की स्वतन्त्रता का निरादर करते हैं। अंग्रेजी भाषा के आरएसवी अनुवाद जब बाहर आया या प्रकाशित

हुआ तब उसे स्वीकार करने के लिये अधिकत्तर लोग तैयार नहीं थे। कई लोग सोचते थे कि वह तत्कालीन सुपरिचित किंग जैम्स अनुवाद नहीं है (कुछ लोग तो अब भी ऐसा सोचते हैं)। किन्तु जब किसी व्यक्ति ने इस बात को समझाने का प्रयास किया कि आरएसवी अनुवाद मूल पाण्डु लिपि से उसके बहुत करीब है तो एक किंग जैम्स भक्त ने इस प्रकार से कहा, "यदि प्रेरित पौलुस किंग जैम्स अनुवाद को पसन्द करते थे तो मेरे लिये भी वह काफी है।" इंग्लैण्ड के जैम्स राजा के अनुसार कुछ पण्डितों ने मिलकर षोलह सौ ग्यारह में किंग जैम्स अनुवाद का प्रकाशन किया था और यह पौलुस के पन्द्रह सदी बाद की घटना थी।

परंपराएँ और प्रथाएँ हमारे लिये मार्ग निर्देश मात्र हैं। उसमें हमको चिपके रहने की आवश्यकता नहीं है। परमेश्वर एक एक व्यक्ति से अलग अलग रीति से व्यवहार करता है। वो तरीके गलत नहीं होंगे।

मरकुस 10:46-52 तक के भाग में जिस अन्धे को चंगाई मिली वह और यूहन्ना 9 अध्याय में जिस अन्धे को चंगाई मिली वह दोनों के मिलन का एक दृश्य प्रोफेसर मैथ्यु पी थॉमस ने कल्पना की है। पहले व्यक्ति से दूसरे व्यक्ति ने पूछा, "तुझे कैसे चंगाई मिली?" तो दूसरे व्यक्ति ने कहा, "प्रभु ने मुझ से कहा कि तेरा विश्वास तुझे चंगा करता है और मेरी आँखें ठीक हो गई।"

किन्तु दूसरे व्यक्ति ने कहा, "इस प्रकार कोई भी आँखों की रोश्नी नहीं पा सकता है। अगर आँखों की रोश्नी प्राप्त करना है तो यीशु को जमीन पर थूक कर मिट्टी का किचड़ बनाकर उसे हमारी आँखों पे लगाना, और तब उसे जाकर शिलो के कुण्ड में जाकर धोना पड़ेगा, इसके अलावा आँखों की रोश्नी नहीं मिलेगी।"

आजकल कलीसिया के विभाजित होने के लिये इतनी सी बात काफी है। व्यर्थ प्रथाएँ कलीसिया को विभाजित करने का कारण बनती हैं।

हमें परम्पराओं और प्रथाओं को वचन का स्थान लेने की अनुमति नहीं देना चाहिए। वचन केवल स्थिर रहता है। उन प्रथाओं और परम्पराओं से हमें जागृत होना चाहिए जो वचन को रोकती हैं।

ये तेरी आंखो के बीच टीके का काम दें। और इन्हे अपने अपने घरों के चौखट की बाजुओं और अपने फाटकों पर लिखना। (व्यवस्थाविवरण 6:4–9)।

यह पद परमेश्वर के वचन के शिक्षण की अनिवार्य प्रकृति को प्रमाणित करता है। परमेश्वर हमें स्वयं को और अपने बच्चों को सिखाने के किये कहता है ताकि वह हमारे दिल और दिमाग और इच्छा में प्रवेश कर सके। यह शिक्षा नाममात्र की कुछ जानकारी देने वाली शिक्षा नहीं हैं बल्कि असली शिक्षा है जो रूपांतरण में परिणित होती है। यह शिक्षा आदर्श शिक्षा है। बच्चे नकल या अपने माता पिता और अन्य लोगों के माध्यम से सीखते हैं। धर्मशास्त्र स्पष्ट रूप से शिक्षा के समय के विषय इस प्रकार कहता है, ''घर में बैठे, मार्ग पर चलते, लेटते, उठते इनकी चर्चा किया करना।'' शिक्षा के महत्व को आगे के पदों में और मजबूत किया गया है, ''... इन्हें अपने हाथ की चिन्हानी करके बांधना और ये तेरी आंखो के बीच टीके का काम दें। और इन्हे अपने अपने घरों के चौखट की बाजुओं और अपने फाटकों पर लिखना।'' इसका स्पष्ट अर्थ है कि परमेश्वर के वचन को हमारी सोच, दृष्टिकोण, अवधारणाओं, दुनिया को देखने के नजरिये और जीवन के सभी पहलुओं को नियंत्रित करना चाहिए। बच्चे परमेश्वर के उपहार हैं और परमेश्वर ने उन्हे हमें परमेश्वर की महिमा करने वाले एक सार्थक जीवन के लिए परमेश्वर के वचन में प्रशिक्षित करने की आज्ञा के साथ हमें दिया है। माता पिता के रूप में हमें अपने बच्चों को एक मजबूत शरीर के लिये शारीरिक भोजन और परमेश्वर की छवि में एक मजबूत व्यक्तित्व के लिए आत्मिक भोजन (परमेश्वर का वचन) उपलब्ध कराने की जरूरत है।

परमेश्वर के वचन की शिक्षा का महत्व प्रेरित पौलुस की शिक्षाओं में स्पष्ट रूप से स्थापित है, ''पर तू इन बातों पर जो तू ने सीखीं है प्रतीति की थी, यह जानकर दृढ़ बना रह कि तू ने उन्हें किन लोगों से सीखा था, और बालकपन से पवित्रशास्त्र तेरा जाना हुआ है, और तुझे मसीह पर विश्वास करने से उद्धार पाने के लिए बुद्धिमान बना सकता है। पर हर एक पवित्रशास्त्र परमेश्वर की प्रेरणा से रचा गया है, और उपदेश, और समझाने, और सुधारने और धर्म की शिक्षा के लिए लाभदायक है, ताकि परमेश्वर का जन सिद्ध बने और हर एक भले काम के लिए तत्पर हो जाए'' (2 तीमुथियुस 3:14–17)।

पौलुस तीमुथियुस को बेहतर जीवन हेतु सुसज्जित होने में परमेश्वर के वचन के महत्व के विषय में निर्देश दे रहा है। यह भी परमेश्वर के वचन का अध्ययन करने

की ऐसी बुलाहट है जिस पर समझौता नहीं किया जा सकता है। हमें परखने, समझने, और तब प्रतिदिन के जीवन में परमेश्वर के वचन को लागू करने की आवश्यकता है।

2.परमेश्वर के वचन का अध्ययन परमेश्वर की योजना को समझने के लिए आवश्यक है।

परमेश्वर अपने वचन के द्वारा हम पर अपनी योजना प्रकट करना चाहता है कि, ''यहोवा की पुस्तक से ढूँढ़ कर पढ़ो इनमें से एक भी पूरा हुए बिना न रहेगी...'' (यशायाह 34:16)। परमेश्वर ने हमें ईश्वरीय योजनाओं के बारे में हिदायत देने के लिये यीशु मसीह को भेजा। यीशु ने कहा, कि उसकी शिक्षायें परमेश्वर की ओर से है, ''मेरा उपदेश मेरा नहीं, परन्तु मेरे भेजने वाले का है, यदि कोई उसकी इच्छा पर चलना चाहे तो इस उपदेश के विषय में जान जाएगा कि वह परमेश्वर की ओर से है (यूहन्ना 7:16–18)। परमेश्वर का वचन वह ज्योति है जो अंधकार में चमकती है। यह हमें पापी व्यक्ति के धोखे और चालाकी से बचने में मदद करता है। प्रेरित पतरस इस तथ्य के विषय में इस प्रकार कहता है, ''क्योंकि जब हमने तुम्हें अपने प्रभु यीशु मसीह की सामर्थ्य का और आगमन का समाचार दिया था, तो वह चतुराई से गढ़ी हुई कहानियों का अनुकरण नहीं किया था, वरन हमने आप ही उसके प्रताप को देखा था कि परमेश्वर पिता से आदर और महिमा पाई, जब उसे प्रतापमय महिमा से यह वाणी आई, कि यह मेरा प्रिय पुत्र है, जिससे मैं प्रसन्न हूँ और जब हम उसके संग पवित्र पर्वत पर थे, तो स्वर्ग से यही वाणी आते सुना'' (2 पतरस 1:16–18)।

3.परमेश्वर के वचन का अध्ययन अनन्त जीवन के लिए आवश्यक है

परमेश्वर ने हमसे अनन्त जीवन–परमेश्वर के जीवन–की प्रतिज्ञा की है। अनन्त जीवन का अनुभव करने के लिए हमें अपने जीवनों के लिए परमेश्वर के मानक ज्ञात होना चाहिए। भौतिक भरपूरी मात्र से कोई भी वास्तविक जीवन का आनन्द नहीं उठा सकता है। धर्मशास्त्र स्पष्ट रीति से बताता है कि ''जो जो आज्ञा आज मैं तुम्हें सुनाता हूँ, उन सभों पर चलने की चौकसी करना, इसलिए कि तुम जीवित रहो और बढ़ते रहो, और जिस देश के विषय में यहोवा ने तुम्हारे पूर्वजों से सपथ खाई है उसके अधिकारी हो जाओ। और स्मरण रख कि तेरा परमेश्वर यहोवा उन चालीस वर्षों में तुझे सारे जंगल के मार्ग में से इसलिए ले आया है कि वह तुझे नम्र बनाए और तेरी परीक्षा करके यह जान ले कि तेरे मन में क्या है, और कि

शेष पृष्ठ 15 पर...

बाइबल ज्ञान प्रतियोगिता क्रमांक-12

नोट : सभी प्रश्न 2 कुरिन्थियों के पत्री से लिये गये हैं।

1. हमें अपने आप को क्यों परखना है?
2. पौलुस कुरिन्थ के विश्वासियों से कहता है, कि मैं तुम्हारे विषय में ईश्वरीय धुन लगाए रहता हूँ। क्यों?
3. जिसने बहुत बटोरा उसका कुछ अधिक न निकला, और जिसने.....न निकला। (पंक्ति को पूरा कीजिए)
4. हर एक जन को दान कैसे देना चाहिए?
5. क्यों पौलुस अपनी पत्री द्वारा शोकित करने के बाद अब पहले जैसा नहीं पछताता है?
6. परमेश्वर हमें मसीह में किस उत्सव में लिए फिरता है?
7. क्यों पौलुस के शरीर में एक काँटा चुभाया गया?
8. हमारे मन की उमंग कैसी होना चाहिए?
9. प्रभु के द्वारा, जो आत्मा है, हम किस रूप में और कैसे बदलते जाते हैं?
10. हमारी शारीरिक लड़ाई के हथियार किस प्रकार के हैं?

नियम और शर्तें :

- पहेलियों के हल प्राप्त होने की अंतिम तिथि जून 30 है।
- धर्मशास्त्र से मेल खानेवाले उत्तर ही मान्य होंगे। उत्तरों के साथ बाइबल संदर्भ देना अनिवार्य है।
- सभी प्रश्नों के सही हल भेजने वाले ही विजेता घोषित किये जाएंगे।
- कृपया अपना नाम और पता साफ-साफ अक्षरों में लिखें।
- सभी हल पोस्टकार्ड पर लिख कर पत्रिका के पते पर भेजें।

तू उसकी आज्ञाओं का पालन करेगा या नहीं। उसने तुझको नम्र बनाया और भूखा भी होने दिया, फिर वह मन्ना जिसे न तू और तेरे पुरखा जानते थे, वही तुझको खिलाया इसलिए कि वह तुझे सिखाए कि मनुष्य केवल रोटी ही से नहीं जीवित रहता, परन्तु जो जो वचन यहोवा के मुख से निकलते हैं उन्हीं से वह जीवित रहता है'' (व्यवस्थाविवरण 8:1–3) यीशु ने परीक्षा के दौरान इस सत्य का वर्णन इस प्रकार किया। ''मनुष्य केवल रोटी ही से नहीं, परन्तु हर एक वचन से जो परमेश्वर के मुख से निकलता है जीवित रहेगा'' (मत्ती 4:4)।

4.परमेश्वर के वचन का अध्ययन परमेश्वर के साथ घनिष्ठ संबंध के लिए आवश्यक है

परमेश्वर के वचन का अध्ययन हमें अच्छी तरह से परमेश्वर के साथ अंतरंग संबंध ा के महत्व के बारे में समझाएगा। इसे वौद्धिक जानकारी प्राप्त करने के उद्देश्य से किए जाने वाले एक शैक्षणिक कार्य के रूप में नहीं देखना चाहिए, बल्कि किसी के आध्यात्मिक विकास और स्वर्गीय पिता के पास स्वीकार्यता के प्रयोजन के लिए माना जाना चाहिए। यीशु ने परमेश्वर के साथ अंतरंग संबंध में परमेश्वर के वचन के अध्ययन के महत्व के बारे में बताया, जब उसने कहा, कि ''यदि कोई मुझ से प्रेम रखे, तो वह मेरे वचन को मानेगा और मेरा पिता उससे प्रेम रखेगा और हम उसके पास आएंगे और उसके साथ वास करेंगे। जो मुझ से प्रेम नहीं रखता, वह मेरे वचन नहीं मानता, और जो वचन तुम सुनते हो वह मेरा नहीं वरन पिता का है जिसने मुझे भेजा'' (यूहन्ना 14:23–24)। अपनी प्रार्थना में यीशु ने कहा, ''मैंने तेरा नाम उन मनुष्यों पर प्रगट किया, जिन्हें तू ने जगत में से मुझे दिया, वे तेरे थे और तू ने उन्हें मुझे दिया और उन्होंने तेरे वचन को मान लिया है'' (यूहन्ना 17:6)।

रचनायें आमन्त्रित हैं!

मसीही जीवन में उन्नति देने योग्य कहानियाँ, लेख, कवितायें आदि आमन्त्रित हैं। परमेश्वर ने यदि आपको लेखनी के क्षेत्र में वरदान दिया है तो उसका उपयोग करें और अपनी रचनायें स्पष्ट अक्षरों में लिख कर भेजें। योग्य रचनायें अगले अंकों में प्रकाशित की जाएँगी।

शब्द पहेली

इस शब्द पहेली में बाइबल में वर्णित दस पर्वतों के नाम दिए गए हैं। उत्तर प्राप्त करने

म	च	गु	ल	गु	था	इ	फ
ना	ज	कि	न	दी	र	ट	बो
क	च	जी	प	बो	त	ला	क
ए	हे	फ	ता	स	ना	खु	न
बा	च	र्मो	पु	गि	र्जा	घ	अ
ल	बा	नो	न	न्द	रि	र	बा
द	अ	य्यो	स	दी	र	ज्जी	री
सु	सि	रा	वि	श्वा	स	इ	म
ख	ला	फ	रा	दी	पु	र	क
क	बि	स	पि	त	धो	बी	य
क्ष	ति	फ	तृ	दी	त	इ	रा

के लिये उत्पत्ति 8:4, व्यवस्थाविवरण 32:49, 2 राजा 19:31, मत्ती 27:33, यहोशू 8:33, यिर्मयाह 18:14, गिनती 27:12, व्यवस्थाविवरण 3:8, यहोशू 8:30, और न्यायियों 4:12 पढ़कर उन्हें बायें से दायें, ऊपर से नीचे और आड़ी दिशा में ढूंढ़िये।

मूसा

परमेश्वर अपने लोगों को छुड़ाता है

जब मूसा को मिस्र जाने की आज्ञा मिली, तो वह अपने भाई हारून के साथ फिरौन के पास गया और उससे कहा, कि परमेश्वर ने अपने दास इस्राएलियों को जाने के लिए कहा है, लेकिन फिरौन ने इनकार कर दिया।

परमेश्वर ने मूसा से कहा कि नील नदी पर अपनी लाठी डालो, जब उसने ऐसा किया तो पानी, रक्त में बदल गया और सभी मछली मर गए। फिर भी फिरौन ने इस्राएलियों को जाने नहीं दिया।

मूसा ने फिरौन से कई बार जाने देने का निवेदन किया किन्तु हर बार उसने मना कर दिया। परमेश्वर ने मिस्र पर और विपत्तियाँ भेजी। मेंढ़कों और कीड़े मकोड़ों ने भूमि को भर लिया, पशु बीमार होकर मरने लगे, ओले और आग पृथ्वी पर बरसने लगे, टिड्डियों ने सभी पौधों को खा लिया, लेकिन अभी भी फिरौन कठोर बना रहा।

तब यहोवा ने मूसा से कहा कि एक और विपत्ति भेजी जाएगी। हर घर में जेठा मर जाएगा चाहे वह किसी का भी घर हो, लेकिन जिसके घर के दरवाजे पर मेम्ने का रक्त लगा होगा वह बच जाएगा। मूसा ने इस्राएलियों से ऐसा करने के लिए कहा।

उस रात परमेष्वर ने हर घर के जेठे को मार दिया। लेकिन जिनके दरवाजों पर मेम्ने का रक्त लगा हुआ था वे बच गए। अगले दिन फिरौन ने मूसा को मिस्र से निकल जाने के लिए कहा।

इस्राएलियों ने मिस्र छोड़ दिया। तब से हर साल इसी दिन फसह का पर्व मनाया जाता है, क्योंकि इसी दिन परमेष्वर ने अपने लोगों को मिस्र और वहाँ की गुलामी से बाहर लाया था।

उपलब्ध पुस्तकें

10 से अधिक प्रतियों पर विशेष छूट!!

100/-

70/-

50/-

40/-

40/-

25/-

मुफ्त

मुफ्त

प्रतियाँ प्राप्त करने के लिये संपर्क करें -

Sanctuary Literature Service
P.B. N0. 27, Bilaspur, C.G- 495 001.
Cell Phone : +91 94255 49016